Shodhbodhalaya: An International Peer reviewed Multidisciplinary Journal

Volume 3 | Issue 1 | ISSN: 2584-1807 | (https://shodhbodh.com/)

प्राचीन कालीन वैदिक शिक्षा प्रणाली—एक अध्ययन

डॉ. देवेन्द्र कुमार मिश्र
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा

सारांश

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति संसार की प्राचीनतम सभ्यता एवं संस्कृतियों में से एक है साथ ही भारतीय वेद संसार के प्राचीनतम ग्रंथ हैं। सामान्यतः वेदों को धार्मिक ग्रंथों के रूप में देखा, समझा जाता है, परन्तु वास्तव में वेद उस समय के ज्ञान कोष है। प्राचीन भारतीय शिक्षा का उदय वेदों (1500-600 B.C.) से माना जाता है। इस काल में शिक्षा पर ब्राह्मणों का आधिपत्य था। अतः कतिपय विद्वानों ने वैदिक कालीन शिक्षा को ब्राह्मणीय शिक्षा का नाम दिया।

वैदिक साहित्य में शिक्षा शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में किया गया है यथा— विद्या बोध और विनय और अनुशासन के पर्याय के रूप में किया जाता था इन रूपों में भी संकुचित और व्यापक दोनों अर्थों में किया जाता था। सामान्यतः बच्चों को परिवारों में विद्यारम्भ संस्कार और गुरूकुलों में उपनयन संस्कार के बाद विभिन्न विषयों में दिये जाने वाले ज्ञान एवं कला कौशल में प्रशिक्षण को शिक्षा कहा जाता था यह शिक्षा का संकुचित अर्थ था।[अपप]

गुरूकुल शिक्षा के उपरांत समावर्तन समारोह होता था, जिसमें गुरू शिष्यों को एक उपदेश यह भी देते थे कि स्वाध्याय में कभी प्रमाद (आलस्य) मत करना। इसका अर्थ है कि उस काल में जीवन भर स्वाध्याय द्वारा ज्ञानार्जन किया जाता था। यह शिक्षा का व्यापक अर्थ था।

Volume 3 | Issue 1 | ISSN: 2584-1807 | (https://shodhbodh.com/)

शिक्षा के उद्देश्य–

डॉ0 अल्तेकर के शब्दों में–''ईश्वर भक्ति तथा धार्मिकता की भावना, चरित्र–निर्माण, व्यक्तित्व का विकास, नागरिक और सामाजिक कर्तव्यों का पालन, सामाजिक कुशलता की उन्नति और राष्ट्रीय संस्कृति का संरक्षण एवं प्रसार प्राचीन भारत में शिक्षा के मुख्य उद्देश्य एवं आदर्श थे।''[अपप]

- ज्ञान का विकास– सर्वप्रमुख उद्देश्य था।
- स्वास्थ्य संरक्षण एवं संवर्द्धन।
- सामाजिक एवं राष्ट्रीय कर्तव्यों का बोध एवं पालन।
- संस्कृति का संरक्षण एवं विकास।
- नैतिक एवं चारित्रिक विकास।
- जीविकोपार्जन एवं कला कौशल की शिक्षा।
- आध्यात्मिक उन्नति।

शिक्षा का प्रशासन एवं वित्त–

इस संबंध में तीन उल्लेखनीय तथ्य हैं–

राज्य के नियंत्रण से मुक्त–

शिक्षा व्यवस्था पर राज्य का कोई नियंत्रण नहीं था। उस समय शिक्षा पूर्ण रूप से गुरूओं के व्यक्तिगत नियंत्रण में थी।

निःशुल्क शिक्षा–

शिक्षा पूर्ण रूप से निःशुल्क रही, शिष्यों के आवास एवं भोजन की व्यवस्था भी गुरू स्वयं करते थे।

आय के स्रोत–

दान, भिक्षा और गुरू दक्षिणा।

गुरूकुलों को आज की भाँति राज्य से कोई निश्चित अनुदान प्राप्त नहीं होता था। उस समय राजा, महाराजा और समाज के धनी वर्ग के लोग इन गुरूकुलों को स्वेच्छा से भूमि, पशु, अन्न, वस्त्र, पात्र और मुद्रा दान स्वरूप भेंट करते थे। गुरूकुलों को दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए शिष्य समाज से नित्य भिक्षा माँग कर लाते थे।[अपप]

इनकी आय का तीसरा स्रोत था– गुरू दक्षिणा। शिष्य अपनी शिक्षा समाप्त होने पर गुरूओं को अपनी सामर्थ्यानुसार गुरू दक्षिणा देते थे भूमि, पशु, वस्त्र, पात्र अथवा मुद्रा भेंट करते थे।

शिक्षा की संरचना एवं संगठन– वैदिक काल में शिक्षा केवल दो स्तरों में विभाजित थी–प्राथमिक शिक्षा और उच्च शिक्षा।

प्रारंभिक शिक्षा–

प्रारंभिक शिक्षा की व्यवस्था परिवारों में होती थी लगभग 5 वर्ष की आयु पर किसी शुभ दिन बच्चे का विद्यारम्भ संस्कार किया जाता था। यह संस्कार परिवार के कुल पुरोहित द्वारा कराया जाता था बच्चा स्नान कर, नया वस्त्र धारण कर, पुरोहित के सम्मुख जाता था जो नये वस्त्र में चावल बिछाता था और वेद मंत्रों द्वारा देवताओं की आराधना कर बच्चे की उंगली पकड़कर उसके द्वारा बिछे हुए चावलों में वर्णमाला के अक्षर बनवाए जाते थे। कुल पुरोहित बच्चे को आशीर्वाद देता था और इसके बाद बच्चे की शिक्षा नियमित रूप से प्रारम्भ होती थी।[अपप]

उच्च शिक्षा–

यह शिक्षा गुरूकुलों में होती थी 8 से 12 वर्ष की आयु पर बच्चों का गुरूकुलों में प्रवेश होता था, 8 वर्ष की आयु पर ब्राह्मण बच्चों का 10 वर्ष की आयु पर क्षत्रिय बच्चों का और 12 वर्ष की आयु पर वैश्य बच्चों का।[अपप]

Global Insights, Multidisciplinary Excellence

Shodhbodhalaya: An International Peer reviewed Multidisciplinary Journal

Volume 3 | Issue 1 | ISSN: 2584-1807 | (https://shodhbodh.com/)

गुरूकुलों में प्रवेश के समय बच्चों का उपनयन संस्कार होता था। इन संस्कारों के बाद उनकी उच्च शिक्षा आरम्भ होती थी।

प्रारंभिक शिक्षा की पाठ्यचर्या–

इसमें भाषा, व्याकरण, छन्दशास्त्र और गणना का सामान्य ज्ञान और सामाजिक व्यवहार एवं धार्मिक क्रियाओं को स्थान प्राप्त था। उत्तर वैदिक काल में नीति प्रधान कहानियों को और जोड़ दिया गया।

उच्च शिक्षा की पाठ्यचर्या–

इसे दो भागों में विभाजित किया जा सकता था–

सामान्य–उच्च स्तर पर संस्कृत भाषा और उसके व्याकरण तथा धर्म एवं नीति शास्त्र की शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जाती थी। इसके अतिरिक्त उन्हें नित्य व्यायाम करना होता था। गुरूकुल की व्यवस्था करनी होती थी और गुरू सेवा करनी होती थी, इसे सामान्य शिक्षा की संज्ञा दी जाती थी।[अपप]

विशिष्ट शिक्षा–प्रारंभिक वैदिक काल में वैदिक साहित्य के विभिन्न ग्रंथों कर्मकाण्ड, ज्योतिर्विज्ञान, आयुर्विज्ञान, सैनिक शिक्षा, कृषि, पशुपालन, कला–कौशल, राजनीतिशास्त्र, भू–गर्भ शास्त्र और प्राणिशास्त्र की शिक्षा ऐच्छिक थी। उत्तर वैदिक काल में इसमें इतिहास, पुराण, नक्षत्र विद्या, न्यायशास्त्र, अर्थशास्त्र, देवविद्या, ब्रह्म विद्या और भूत विद्या आदि अन्य विषय जोड़े गए।[अपप]

प्रकृति के आधार पर निम्न दो रूपों में विभाजित किया जाता है–

अपरा (भौतिक) पाठ्यचर्या–

इसके अंतर्गत भाषा, व्याकरण, अंकशास्त्र, कृषि, पशुपालन, कला (संगीत एवं नृत्य) कौशल (कताई, बुनाई, रंगाई, काष्ठ कार्य, धातु कार्य एवं शिल्प) अर्थशास्त्र राजनीतिशास्त्र, भूगर्भशास्त्र,

प्राणिशास्त्र, सूर्यविद्या, तर्कशास्त्र, ज्योतिर्विज्ञान, आयुर्विज्ञान, एवं सैनिक शिक्षा का अध्ययन और व्यायाम, गुरूकुल व्यवस्था एवं गुरू सेवा क्रियाएँ सम्मिलित थी।[अपप]

परा (आध्यात्मिक) पाठ्यचर्या–

इसके अंतर्गत वैदिक साहित्य (वेद, वेदांग एवं उपनिषद्) धर्मशास्त्र और नीतिशास्त्र का अध्ययन और इन्द्रियनिग्रह, धर्मानुकूल आचरण, ईश्वर भक्ति, सन्ध्यावन्दन और यज्ञादि क्रियाओं का प्रशिक्षण सम्मिलित था।[अपप]

शिक्षण विधियाँ–

वैदिक काल में शिक्षण सामान्यतः मौखिक रूप से होता था और प्रायः प्रश्नोत्तर, शंका–समाधान, व्याख्यान और वाद–विवाद द्वारा होता था। उस समय भाषा की शिक्षा हेतु अनुकरण विधि और कला–कौशल की शिक्षा हेतु प्रदर्शन एवं अभ्यास विधियों का प्रयोग किया जाता था।[अपप]

उपनिषदों ने श्रवण, मनन और निदिध्यासन विधि का विकास किया। उत्तर वैदिक काल में छोटे बच्चों की शिक्षा के लिए कहानी विधि और उच्च स्तर के शिष्यों के लिए तर्क विधि का विकास किया।

- अनुकरण, आवृत्ति एवं कण्ठस्थ विधि
- व्याख्या एवं दृष्टान्त विधि
- कथन, प्रदर्शन एवं अभ्यासविधि
- प्रश्नोत्तर, वाद–विवाद और शास्त्रार्थ विधि
- श्रवण, मनन निदिध्यासन विधि
- तर्क विधि
- कहानी विधि।

उस काल में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में विशुद्ध संस्कृत भाषा ही शिक्षा का माध्यम थी। गुरूकुलों में गुरू ब्राह्मण वर्ण के योग्य छात्रों को नायक बनाने लगे जो कनिष्ठ छात्रों को भाषा, साहित्य, धर्म और नीतिशास्त्र विषयों का ज्ञान कराते थे।

शिक्षक और शिक्षार्थी–

उस काल में अति विद्वान स्वाध्यायी, धर्मपरायण और सच्चरित्र व्यक्ति ही गुरू हो सकते थे। इन्हें समाज में सर्वोच्च स्थान प्राप्त होता था। ये अपने गुरूकुलों की सम्पूर्ण व्यवस्था के लिए उत्तरदायी होते थे। ये अपने शिष्यों के आवास, भोजन एवं वस्त्रादि की व्यवस्था करते थे, उनके स्वास्थ्य की देखभाल करते थे, उनके सर्वागींण विकास के लिए प्रयत्न करते थे।[अपप]

वैदिक काल में अविवाहित बच्चों को ही गुरूकुलों में प्रवेश मिलता था। उस काल में शिष्यों को ब्रह्मचारी कहा जाता था। जो अध्ययन के साथ–साथ गुरूकुलों की व्यवस्था भी करते थे। गुरूकुल के नियमों का पालन और गुरू सेवा इनका परम कर्तव्य होता था। इनकी दिनचर्या बहुत नियमित होती थी।

वैदिक काल में गुरू और शिष्यों के मध्य बहुत मधुर सम्बन्ध थे। गुरू शिष्यों को पुत्रवत् मानते थे और शिष्य गुरूओं को पिता तुल्य मानते थे। ऊपर से प्रेम बरसता था और नीचे से श्रद्धा उमड़ती थी।[अपप]

शिक्षण संस्थाएँ–

वैदिक काल में प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था परिवारों और उच्च शिक्षा की व्यवस्था मुख्य रूप से गुरूकुलों में होती थी, जो जन कोलाहल से दूर प्रकृति की सुरम्य गोद में किसी नदी या झरने के किनारे स्थित होते थे। परन्तु उत्तर वैदिक काल में ये बड़े–बड़े गॉवों और तीर्थ स्थानों के निकट स्थापित होने लगे। उस काल में गुरूकुल आवासीय होते थे, इनके अपने नियम होते थे और अपनी कार्य पद्धति होती थी। वैदिक काल में अनेक प्रकार के गुरूकुल होते थे।

(a) **टोल–** जहाँ केवल भाषा और साहित्य की उच्च शिक्षा दी जाती थी।

(b) **अटिका–** जहाँ भाषा, साहित्य, धर्म, दर्शन और नीतिशास्त्र का विशेष ज्ञान कराया जाता था।

(c) **चरण–**जहाँ किसी वेद के किसी अंग विशेष का विशिष्ट ज्ञान कराया जाता था।

(d) **चतुत्पथी–** जहाँ चारों शास्त्रों (दर्शन, पुराण, व्याकरण और राजनियमों) की शिक्षा दी जाती थी।

गुरूकुलों में भिन्न–भिन्न वर्ण के बच्चों का प्रवेश भिन्न–भिन्न आयु पर होता था– ब्राह्मण वर्ण के बच्चों का 8 वर्ष की आयु पर, क्षत्रिय वर्ण के बच्चों को 10 वर्ष की आयु पर और वैश्य वर्ण के बच्चों का 12 वर्ष की आयु पर, प्रवेश के समय सभी बच्चों का उपनयन संस्कार होता था। उच्च शिक्षा की व्यवस्था गुरूकुलों के अलावा–ऋषि आश्रम परिषद, सम्मेलन, परिब्राजाचार्य में भी थी।[अपप]

परीक्षाएँ एवं उपाधियाँ–

वैदिक काल में आज की तरह की परीक्षाएँ नहीं होती थी। सर्वप्रथम गुरू तदुपरान्त विद्वानों की सभा में छात्रों से प्रश्न पूछा जाता था संतुष्ट होने पर उन्हें सफल घोषित किया जाता था। सफल छात्रों को कोई प्रमाणपत्र नहीं दिये जाते थे उनकी योग्यता ही उनका प्रमाण पत्र होती थी।[अपप] जो छात्र गुरूकुलों का 12 वर्षीय सामान्य पाठ्यक्रम (किसी एक वेद का अध्ययन पूरा) पूरा कर लेते थे उन्हें स्नातक, जो 24 वर्षीय पाठ्यक्रम (किन्ही दो वेदों का अध्ययन) पूरा कर लेते थे उन्हें वसु। जो 36 वर्षीय पाठ्यक्रम (किन्ही तीन वेदों का अध्ययन) पूरा कर लेते थे उन्हें रूद्र और जो 48 वर्षीय पाठ्यक्रम (चारों वेदों का अध्ययन) पूरा कर लेते थे उन्हें आदित्य कहा जाता था।

समावर्तन समारोह–

वैदिक काल में शिष्यों की गुरूकुलीय शिक्षा पूरी होने पर समावर्तन समारोह (घर लौटना) होता था। जिसमें छात्रों को ब्रह्मचारी वस्त्र उतार कर गृहस्थ वस्त्र पहनाए जाते थे। उन्हें यज्ञवेदी के सामने बैठाते थे इसके बाद गुरू शिष्यों को उपदेश (दीक्षांत भाषण) देते थे गृहस्थ जीवन के कर्तव्य पालन, समाज सेवा और राष्ट्र के प्रति कर्तव्य पालन का उपदेश देते थे। तैत्तिरीय उपनिषद् में इस प्रकार के दीक्षान्त भाषण का उल्लेख है। आज के अधिकतर भारतीय विश्वविद्यालयों में दीक्षान्त समारोहों में तैत्तिरीय उपनिषद् दीक्षान्त उपदेश दिये जाते हैं।[अपप]

Volume 3 | Issue 1 | ISSN: 2584-1807 | (https://shodhbodh.com/)

शिक्षा के अन्य विशेष पक्ष–

(i) **जन शिक्षा–**

उस काल में उच्च शिक्षा की व्यवस्था गुरूकुलों में होती थी जो कुछ विशेष स्थानों में ही स्थित थे, अतः सभी बच्चे इनमें प्रवेश नहीं ले पाते थे। उत्तर वैदिक काल में शूद्रों को उच्च शिक्षा के अधिकार से वंचित कर दिया गया था।

(ii) **स्त्री शिक्षा–**

प्रारम्भिक वैदिक काल में स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने का समान अधिकार प्राप्त था लेकिन उत्तर वैदिक काल में वर्णानुसार शिक्षा दिये जाने से शूद्रवर्ण की स्त्रियों को तो उच्च शिक्षा के अधिकार से वंचित कर दिया गया। पृथक गुरूकुलों के अभाव से केवल गुरूओं की पुत्रियॉं, राजघरानों और राज्यों में ऊँचे पदों पर आसीन व्यक्तियों की पुत्रियाँ और अतिधनी व्यक्तियों की पुत्रियाँ ही इन गुरूकुलों में प्रवेश ले पाती थीं।[अपप] यद्यपि उस काल में विश्ववारा, अपाला, होमशा, शाश्वती, और धोषा आदि अनेक विदुषी महिलाओं का उल्लेख मिलता है तथापि स्त्री शिक्षा बहुत सीमित थी।

(iii) **व्यावसायिक शिक्षा–**

वैदिक काल में योग्यतानुसार एवं वर्णानुसार कर्म (व्यवसाय) की शिक्षा भी दी जाती थी। गौतम धर्मसूत्र में 27 प्रकार के शिल्पियों का उल्लेख मिलता है।

तक्षशिला और पाटलिपुत्र आयुर्विज्ञान और शल्य विज्ञान की शिक्षा के मुख्य केन्द्र थे। उस काल में पशु चिकित्सा विज्ञान का भी विकास हो चुका था।

(iv) **धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा–**

इस शिक्षा पर सर्वाधिक बल दिया जाता था जो सभी गुरूकुलों में अनिवार्य थी उस काल में सम्पूर्ण शिक्षा संस्कार प्रधान थी।

वैदिक कालीन मुख्य शिक्षा केन्द्र थे[अपप]–

- तक्षशिला,
- केकय
- मिथिला
- प्रयाग
- काशी
- कॉचीं।

वैदिक शिक्षा के गुण–

- निःशुल्क शिक्षा,
- शिक्षा के व्यापक उद्देश्य
- गुरू एवं शिष्यों का अनुशासित जीवन
- गुरू शिष्यों के मध्य मधुर संबंध
- गुरूकुलों का उत्तम पर्यावरण और संस्कार प्रधान जीवन पद्धति।

वैदिक शिक्षा प्रणाली के दोष–

- शिक्षा राज्य का उत्तरदायित्व नहीं,
- आय के अनिश्चित स्रोत एवं भिक्षाटन,
- शिक्षा की अमनोवैज्ञानिक संरचना,

- रटने पर अधिक बल,
- कठोर अनुशासन,
- जनशिक्षा का अभाव,
- स्त्री शिक्षा की समुचित व्यवस्था का अभाव,
- धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा पर अधिक बल।

निष्कर्षतः वैदिक शिक्षा प्रणाली उस समय की श्रेष्ठतम् शिक्षा प्रणाली थी और उसके कुछ तत्व आज भी ग्रहणीय है।[अपप]

बौद्ध काल में शिक्षा–

बौद्ध धर्मों का विकास मठों में हुआ, बौद्ध धर्म के प्रचार व प्रसार के लिए बौद्ध मठों तथा बिहारों की स्थापना की गयी थी जिन्हें बौद्ध संघाराम भी कहा जाता था प्रारम्भ में इन मठों तथा बिहारों का एकमात्र उद्देश्य बौद्धों को धर्म की शिक्षा प्रदान करना था। परन्तु कालान्तर में सभी धर्मों के छात्रों को इन मठों या विहारों में शिक्षा दी जाने लगी। बौद्ध कालीन शिक्षा काफी सीमा तक वैदिक शिक्षा के समान ही थी।[अपप]

(क) बौद्धकालीन शिक्षा की विशेषताएँ[अपप] –

- नैतिक चरित्र का निर्माण करना,
- बौद्धधर्म का प्रसार करना,
- व्यक्तित्व का विकास करना,

- जीवन के लिए तैयार करना,
- आष्टांगिक मार्ग का अनुसरण करना।

(ख) शिक्षा का प्रशासन एवं वित्त–

शिक्षा पर व्यक्ति विशेष का नहीं बल्कि बौद्ध संघों का नियंत्रण था। कतिपय राजाओं ने धन उपलब्ध कराये एवं संचालन हेतु गांव के गांव दान में दिये। प्राथमिक शिक्षा निःशुल्क थी, जबकि उच्च शिक्षा के छात्रों से शुल्क लिया जाता था।

(ग) शिक्षा की संरचना एवं संगठन–

बौद्ध शिक्षा प्रणाली में शिक्षा को तीन स्तरों में बांटा गया था[अपप]–

(i) **प्राथमिक शिक्षा–**

यह बौद्ध मठों एवं विहारों में दी जाती थी यह 6 वर्ष की आयु से 12 वर्ष की आयु तक चलती थी।

(ii) **उच्च शिक्षा–**

प्राथमिक शिक्षा पूरी करने के बाद उच्च शिक्षा हेतु एक प्रवेश परीक्षा होती थी ताकि योग्य छात्रों का ही प्रवेश हो यह शिक्षा सामान्यतः 12 वर्ष की आयु पर शुरू होती थी और 20–25 वर्ष की आयु तक चलती थी।[अपप]

(iii) **भिक्षु शिक्षा–**

उच्च शिक्षा प्राप्ति के बाद जो छात्र बौद्ध धर्म के प्रचार एवं प्रसार कार्य में लगना चाहते थे उन्हें **उपसम्पदा संस्कार** के बाद भिक्षु शिक्षा में प्रवेश दिया जाता था जो सामान्यतः 8 वर्ष की होती थी शिक्षा प्राप्ति के बाद वे भिक्षु कहलाते थे और धर्म प्रचार और शिक्षण कार्य करते थे।[अपप]

(घ) शिक्षा की पाठ्यचर्या–

इसका अध्ययन निम्न प्रकार से कर सकते हैं–

(i) **प्राथमिक स्तर की पाठ्यचर्या–**

इसकी अवधि 6 वर्ष थी इस स्तर पर सर्वप्रथम सिद्धरस्त नामक पोथी के द्वारा पाली भाषा के 49 अक्षरों का ज्ञान कराया जाता था। तत्पश्चात् भाषा का पढ़ना–लिखना सिखाया जाता था।

(ii) **उच्च स्तर की पाठ्यचर्या–**

इस अवधि में छात्रों को सर्वप्रथम व्याकरण, धर्म, ज्योतिष, आयुर्विज्ञान, और दर्शन का सामान्य ज्ञान कराया जाता था और उसके बाद विशिष्ट शिक्षा शुरू की जाती थी।[अपप]

(iii) **भिक्षु शिक्षा की पाठ्यचर्या–**

बौद्ध धर्म एवं दर्शन के साथ–साथ धर्म के तुलनात्मक अध्ययन हेतु वैदिक धर्म का भी ज्ञान कराया जाता था।

(ङ) शिक्षण विधियाँ[अपपप]–

इस काल में बोलचाल की भाषा पाली थी, बौद्धों ने इसी को शिक्षा का माध्यम बनाया। यद्यपि मुद्रणालय का तो विकास नहीं हुआ था परन्तु बौद्ध भिक्षुओं ने मुख्य ग्रंथों की हस्तलिखित प्रतियॉ तैयार कर दी थी।[अपप] प्राचीन ग्रंथों के पाली भाषा में अनुवाद कर उन्हें पुस्तकालयों में सुरक्षित रखा था उन्होंने निम्न विधियों का प्रयोग किया–अनुकरण विधि, प्रश्नोत्तर विधि, व्याख्या विधि, वाद–विवाद एवं तर्क–विधियाँ, व्याख्यान विधि। सम्मेलन, शास्त्रार्थ, प्रदर्शन, अभ्यास, देशाटन विधि आदि।

(च) अनुशासन एवं शिक्षक–

अनुशासन–बौद्धकाल में गुरू एवं शिष्य दोनों को बौद्ध संघों के नियमों का कठोरता के साथ पालन करना होता था। सामान्य छात्रों को प्रब्रज्जा संस्कार के समय बताए गये 10 नियमों का कठोरता

के साथ पालन करना होता था। नियम भंग करने पर उन्हें दंड मिलता था जो निष्कासन भी हो सकता था।

(छ) शिक्षक–

उस काल में बौद्ध भिक्षु ही शिक्षण कार्य करते थे उन्हें उपाध्याय कहा जाता था। शिक्षार्थियों को श्रमण अथवा खामनेर कहा जाता था गुरू, शिष्यों को पुत्रवत मानते थे और शिष्य गुरूओं को पिता तुल्य मानते थे।

(ज) शिक्षण संस्थाऍं (बौद्ध मठ एवं विहार)[अपप] –

बौद्ध शिक्षा प्रणाली में प्राथमिक एवं उच्च दोनों स्तरों की शिक्षा की व्यवस्था बौद्ध मठों एवं विहारों में होती थी जो बड़े–बड़े नगरों के निकट खुले स्थान पर बनाए गये थे इनमें आवासीय शिक्षा की व्यवस्था थी। यहाँ सभी जाति के बच्चों को प्रवेश दिया जाता था प्रवेश के समय बच्चों का प्रब्रज्जा संस्कार होता था। उस काल में आज की तरह परीक्षाएँ नहीं होती थी। प्राथमिक स्तर पर तो अधिकारी शिक्षक संतुष्ट होने पर उन्हें सफल घोषित करते थे। उन्हें प्रमाणपत्र नहीं मिलता था। उच्च स्तर पर शिक्षकों का एक पैनल छात्रों की मौखिक रूप से परीक्षा लेता था और सफल छात्रों को उपाधियाँ दी जाती थी। ऐसे छात्र जो गृहस्थ जीवन के स्थान पर भिक्षु शिक्षा में प्रवेश करना चाहते थे उनका उप सम्पदा संस्कार होता था।[अपप]

निष्कर्ष–

वैदिक साहित्य में शिक्षा शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में किया गया है यथा– विद्या बोध और विनय और अनुशासन के पर्याय के रूप में किया जाता था इन रूपों में भी संकुचित और व्यापक दोनों अर्थों में किया जाता था। सामान्यतः बच्चों को परिवारों में विद्यारम्भ संस्कार और गुरूकुलों में उपनयन संस्कार के बाद विभिन्न विषयों में दिये जाने वाले ज्ञान एवं कला कौशल में प्रशिक्षण को शिक्षा कहा जाता था यह शिक्षा का संकुचित अर्थ था।

आज की तरह न सही लेकिन उस काल में जन शिक्षा का प्रचलन अवश्य प्रारम्भ हो गया था। प्राथमिक और उच्च दोनों शिक्षा व्यवस्था का प्रचलन मठों एवं विहारों में होने लगा था। सभी वर्णों के बच्चों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार दिया गया यद्यपि यह जनशिक्षा सीमित थी।

गुरूकुल शिक्षा के उपरांत समावर्तन समारोह होता था, जिसमें गुरू शिष्यों को एक उपदेश यह भी देते थे कि स्वाध्याय में कभी प्रमाद (आलस्य) मत करना। इसका अर्थ है कि उस काल में जीवन भर स्वाध्याय द्वारा ज्ञानार्जन किया जाता था। यह शिक्षा का व्यापक अर्थ था।

गुरूकुलों को आज की भाँति राज्य से कोई निश्चित अनुदान प्राप्त नहीं होता था। उस समय राजा, महाराजा और समाज के धनी वर्ग के लोग इन गुरूकुलों को स्वेच्छा से भूमि, पशु, अन्न, वस्त्र, पात्र और मुद्रा दान स्वरूप भेंट करते थे। गुरूकुलों को दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए शिष्य समाज से नित्य भिक्षा माँग कर लाते थे।

प्रारंभिक शिक्षा की व्यवस्था परिवारों में होती थी लगभग 5 वर्ष की आयु पर किसी शुभ दिन बच्चे का विद्यारम्भ संस्कार किया जाता था। यह संस्कार परिवार के कुल पुरोहित द्वारा कराया जाता था बच्चा स्नान कर, नया वस्त्र धारण कर, पुरोहित के सम्मुख जाता था जो नये वस्त्र में चावल बिछाता था और वेद मंत्रों द्वारा देवताओं की आराधना कर बच्चे की उंगली पकड़कर उसके द्वारा बिछे हुए चावलों में वर्णमाला के अक्षर बनवाए जाते थे। कुल पुरोहित बच्चे को आशीर्वाद देता था और इसके बाद बच्चे की शिक्षा नियमित रूप से प्रारम्भ होती थी।

उस काल में अति विद्वान स्वाध्यायी, धर्मपरायण और सच्चरित्र व्यक्ति ही गुरू हो सकते थे। इन्हें समाज में सर्वोच्च स्थान प्राप्त होता था। ये अपने गुरूकुलों की सम्पूर्ण व्यवस्था के लिए उत्तरदायी होते थे। ये अपने शिष्यों के आवास, भोजन एवं वस्त्रादि की व्यवस्था करते थे, उनके स्वास्थ्य की देखभाल करते थे, उनके सर्वागींण विकास के लिए प्रयत्न करते थे।

वैदिक काल में अविवाहित बच्चों को ही गुरूकुलों में प्रवेश मिलता था। उस काल में शिष्यों को ब्रह्मचारी कहा जाता था। जो अध्ययन के साथ–साथ गुरूकुलों की व्यवस्था भी करते थे। गुरूकुल

के नियमों का पालन और गुरू सेवा इनका परम कर्तव्य होता था। इनकी दिनचर्या बहुत नियमित होती थी।

संदर्भ–

vii प्रो. राम सकल पाण्डेय–उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, पृ. 2

vii प्रो. राम सकल पाण्डेय – उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, पृ. 23

vii पी.डी. पाठक – भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ, पृ. 12

vii डॉ. डी.एस. श्रीवास्तव – भारत में शिक्षा का विकास, पृ. 09

vii पी.डी. पाठक – भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ, पृ. 08

vii डॉ. डी.एस. श्रीवास्तव–भारत में शिक्षा का विकास, पृ. 11

vii डॉ. डी.एस. श्रीवास्तव–भारत में शिक्षा का विकास, पृ. 12

vii ओम प्रकाश गर्ग–भारत में शैक्षिक व्यवस्था का विकास, पृ. 07

vii ओम प्रकाश गर्ग भारत में शैक्षिक व्यवस्था का विकास, पृ. 08

vii डॉ. डी.एस. श्रीवास्तव–भारत में शिक्षा का विकास, पृ. 15

vii डॉ. ओमवती गुप्ता – भारत में शिक्षा का विकास, पृ. 05

vii डॉ. ओमवती गुप्ता – भारत में शिक्षा का विकास, पृ. 05

vii रामबिहारीलाल, पृ. 12

vii डॉ. डी.एस. श्रीवास्तव – भारत में शिक्षा का विकास, पृ. 09

vii रमन बिहारी लाल– भारतीय शिक्षा पृ. 12

vii डॉ. डी.एस. श्रीवास्तव – भारत में शिक्षा का विकास, पृ. 13

vii डॉ. डी.एस. श्रीवास्तव – भारत में शिक्षा का विकास, पृ. 25

vii रमन बिहारी लाल– भारतीय शिक्षा का विकास एवं उसकी समस्याएँ, पृ. 14–15

vii डॉ. ओम प्रकाश गर्ग – भारत में शैक्षिक व्यवस्था का विकास, पृ. 12

vii डॉ. पी.डी. पाठक – भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ, पृ. 22

vii डॉ. एस.पी.गुप्ता–भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएँ पृ. 20

vii डॉ. डी.एस. श्रीवास्तव – भारत में शिक्षा का विकास, पृ. 21

vii डॉ. डी.एस. श्रीवास्तव – भारत में शिक्षा का विकास, पृ. 22

vii डॉ. रमन बिहारी लाल – भारतीय शिक्षा का विकास एवं उसकी समस्याएँ, पृ. 34

vii पी.डी. पाठक – भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ, पृ. 23

vii रमन बिहारी लाल–भारतीय शिक्षा का विकास एवं उसकी समस्याएँ, पृ. 34

vii पी.डी. पाठक – भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ, पृ. 23

vii रमन बिहारी लाल– भारतीय शिक्षा का विकास एवं उसकी समस्याएँ,पृ. 38

vii डॉ. डी.एस. श्रीवास्तव – भारत में शिक्षा का विकास, पृ. 21

vii डॉ. ओमवती गुप्ता – भारतीय शिक्षा का विकास, पृ. 08